अध्याय-2

दुष्यंत कुमार की काव्य-यात्रा

1. आरम्भिक कविताएँ
2. काव्य-संग्रह :
2.1 सूर्य का स्वागत
2.2 आवाजों के घेरे
2.3 जलते हुए वन का वसंत
3. गजल-संग्रह : साये में धूप
4. गीति-नाट्य : एक कंठ विषपायी

सन्दर्भ-सूची

दुष्यंत कुमार नई कविता के विशिष्ट कवि हैं । वे ऐसे कवि हैं जिन्होंने प्रसिद्धि पाने या अपनी पहचान बनाने के लिए न कभी अपनी लेखनी को किसी संकुचित सीमा में आबद्ध किया और न ही अपने लेखकीय उत्तरदायित्व से कभी समझौता किया । इनकी लेखनी में निहित 'जन-प्रतिबद्धता' और 'सामाजिक यथार्थ' इन्हें अपने समकालीनों से अलगाकर विशिष्ट पहचान देती है । इनका पदार्पण हिन्दी साहित्य जगत में ऐसे समय में हुआ, जब अन्य रचनाकार अज्ञेय द्वारा सम्पादित 'सप्तकों' में स्थान पाने के लिए अपने आप को उस कसौटी के अनुरूप ढाल रहे थें । अज्ञेय द्वारा सम्पादित 'सप्तकों' में स्थान पाने को आतुर कविगण प्रयोग के नाम पर छद्म और बौद्धिकता को आधार बनाकर अनर्गल सर्जना करने में प्रयासरत दिख रहे थें । काव्यगत उथल-पुथल के उस दौर में सहजता के कवि दुष्यंत कुमार व्यक्तित्व और कृतित्व दोनों ही दृष्टियों से अपनी सशक्त उपस्थिति दर्ज कराते हैं । छद्म और बौद्धिकता के प्रत्युत्तर में कवि जन-जागरण और जन-उन्मेष की भावना तथा व्यक्तिगत कुंठा के स्थान पर सामाजिक चिंता को लेकर पदार्पण करते हैं । कवि दुष्यंत के कवि कर्म का दायरा विस्तृत है । अपने कवि-कर्म का धर्म बताते हुए वे लिखते हैं –

" सीमाओं में बँधा नहीं हूँ धरती मेरा देश है
मेरे कवि का धर्म जागरण औ' जन उन्मेष है ।"[1]

दुष्यंत कुमार की कविताओं में जो बेबाकपन, आडम्बरहीनता और

सामाजिक यथार्थ की अभिव्यक्ति मिलती है, उसे देखकर ऐसा लगता है कि वे कबीर, निराला और नागार्जुन की परम्परा के कवि हैं । अन्याय का प्रतिवाद करने का जो साहस इन पूर्ववर्ती कवियों की लेखनी में रहा है, वही साहस कवि दुष्यंत कुमार की लेखनी में भी दृष्टिगत होता है । आँखों के सामने सामान्यजन के साथ अन्याय होता देख, वे जुबा को खामोश नहीं रख पाते हैं ।

कवि दुष्यंत कुमार ने जीवन को जिस रूप में जाना, अनुभूत किया, उसके यथार्थ को उसी रूप में अपनी कविताओं में व्यक्त किया । उन्होंने न तो परम्परा का सर्वथा त्याग किया और न ही आधुनिकता का अंधानुकरण किया । परम्परा का सार्थक प्रयोग और आधुनिकता के सृजनात्मक पक्ष को महत्व देते हुए कवि निर्भय होकर अपने कवि-कर्म की ओर अग्रसर होते गये । विजयबहादुर सिंह कवि दुष्यंत के बारे में लिखते हैं – "वे तो उन साहसिक प्रतिभाओं में से थे जो साहित्य की परम्परा के अदृश्य पारावार और अनुभूत जीवन–यथार्थ के अपरिभाषित कुरूक्षेत्र के बीच पहुँच बेखटके खड़ी हो जाया करती है । परम्परा जहाँ सार्थक प्रयोग और आधुनिकता नवोन्मेषी सृजनशीलता में बदल उठती है । कहना तो चाहिए कि वे साहसी नहीं, एक दुस्साहसी प्रतिभा थे ।"[2] विजयबहादुर सिंह कवि दुष्यंत की निर्भयता की प्रशस्ति करते हैं । दुष्यंत कुमार के रचना संसार में प्रवेश करने पर हम पाते हैं कि लेखनी की निर्भयता ही वह वजह है, जिसके कारण वे अपने पाठकों को वशीभूत कर लेते हैं ।

दुष्यंत कुमार की काव्य-यात्रा को हम इन कोटियों के अंतर्गत रख सकते हैं – (1) आरम्भिक कविताएँ – इसके अंतर्गत वे कविताएँ हैं जो उनके तीनों काव्य-संग्रहों से इतर है और दुष्यंत रचनावली के प्रकाशन पूर्व विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं और हस्तलिखित कापियों में मिलती है, (2) काव्य-संग्रह : सूर्य का स्वागत, आवाजों के घेरे और जलते हुए वन का वसंत उनके प्रकाशित काव्य-संग्रह है, (3) गज़ल-संग्रह – साये में धूप दुष्यंत कुमार का एकमात्र गज़ल-संग्रह है, और (4) गीतिनाट्य – दुष्यंत कुमार ने 'एक कंठ विषपायी' नामक एक गीतिनाट्य लिखा है । यह इनका बहुचर्चित मिथकीय गीतिनाट्य है ।

1. आरम्भिक कविताएँ

दुष्यंत कुमार के कवि का उन्मेष किशोरवय में हो गया था । स्कूल के दिनों की कॉपी और रजिस्ट्रर पर लिखी गयी कई अधूरी कविताएँ इसका साक्ष्य हैं । विजयबहादुर सिंह नहटौर काल को कवि दुष्यंत का अंकुरण काल मानते हुए लिखते हैं –"नहटौर को कवि दुष्यंत का अंकुरण काल कहा जा सकता है ।... ऐसा लगता है कि उनका लेखन इससे पूर्व सातवीं-आठवीं कक्षा में ही शुरू हो चुका था ।....कवि ने चूंकि अपनी इन प्रारम्भिक रचनाओं में कोई तिथि अंकित नहीं की है इसीलिए अनुमान के सहारे ही यह कहना पड़ेगा कि वह सातवीं-आठवीं कक्षा के विद्यार्थी रहे होगें ।"[3]

किशोर कवि दुष्यंत कुमार की आरम्भिक कविताएँ प्राय: अधूरी है । सन् 2005 के पूर्व तक ये कविताएँ इधर-उधर बिखरी हुई थी । सन् 2005 में प्रकाशित 'दुष्यंत रचनावली' में सारी आरंभिक अधूरी और पूर्ण कविताओं को एक स्थान पर संग्रहित करने का कार्य 'दुष्यंत रचनावली' के सम्पादक विजय बहादुर सिंह ने किया है । इन आरम्भिक अधूरी कविताओं में जगह-जगह 'विकल' उपनाम का उल्लेख हुआ है । जिससे यह उजागर होता है कि किशोर कवि दुष्यंत ने अपनी काव्य-यात्रा का आरम्भ 'विकल' उपनाम से किया है । उपनाम का प्रयोग उन्होंने अंतिम पंक्ति में न कर बीच में कहीं भी इच्छानुसार कर दिया है । कुछ पंक्तियाँ इस सन्दर्भ में प्रस्तुत हैं –

" ढक लेती अपना सुन्दर मुख
मैं 'विकल' व्यथित होकर ही तब
गीतों में लिखता अपना दु:ख ।"[4]

दुष्यंत कुमार की आरम्भिक कविताएँ ऐसी हैं जिनमें विकलता की प्रवृति प्रचुर मात्रा में दिखलाई देती है । अपने हृदयस्थ प्रवृति को ही आधार बनाकर कवि ने सम्भवत: अपना उपनाम 'विकल' रखा हो । उनकी आरम्भिक कविताएँ अधिकतर प्रेम और सौंदर्य पर केंद्रित है । इन कविताओं में किशोरवय की सरलता, सहजता, विकलता, भोलापन के साथ-साथ सुन्दरता के प्रति सहज आकर्षण भी विद्यमान है । बचपन की विदाई और यौवन के मधुरागमन के इस

संवेदनशील समय में किशोर कवि दुष्यंत कुमार भी प्रेममय दिखाई पड़ते हैं । वे हेमलता त्यागी नामक सहपाठी के रूप-सौंदर्य के आकर्षण में बँध जाते हैं । दुष्यंत कुमार का कवि मन कभी प्रेमिका की विभिन्न मुद्राओं पर आनन्द और उल्लास से भर उठता है तो कभी उसकी निठुरता कवि मन को विषाद और निराशा से भर देती है । उनकी आरंभिक कविताओं में हृदयगत भावों के इसी आरोह-अवरोह का मार्मिक वर्णन हुआ है –

" चिर प्रतीक्षा में तुम्हारी गल गए लोचन हमारे
कूल हूँ ऐसा जगत का
बुझ न पाई प्यास जिसकी
थक गया पी–पी प्रणय–जल
मिट न पाई साध जिसकी "[5]

सामाजिक प्रतिष्ठा की वजह से परिवारवाले इस संबंध को नकार देते हैं । उनका विवाह अन्यत्र तय कर दिया जाता है । प्रेम की यह दुःखद परिणति कवि मन को अशांत और उद्वेलित कर देती है । अपनी प्रेमिका से अलगाव की पीड़ा कवि को गहराई तक कचोटती है । परिणामस्वरूप इस समय सृजित कविताओं में निराशा, विह्वलता, व्याकुलता और विकलता की प्रवृति प्रचुर मात्रा में दिखाई पड़ती है । उनकी आरंभिक कविताओं में किशोर प्रेम के विविध भावों का मार्मिक अंकन हुआ है । प्रेम के प्रति समाज की संकुचित दृष्टि पर किशोर

कवि ने तीव्र प्रतिक्रिया व्यक्त की है । किशोर कवि की कामना है कि वे सारे सामाजिक नियम जो प्रेम करनेवालों को एक होने से रोकते हैं, टूट जाये । समाज में प्रेम को खुले हृदय से स्वीकारा जाये । छायावादी कवि जयशंकर प्रसाद की तरह कवि भी ऐसे लोक में जाना चाहते हैं जहाँ प्रेम को सहर्ष स्वीकार कर लिया जाए । उसे जाति और मान-मर्यादा की कसौटी पर जाँचा-परखा न जाये । उदाहरण के लिए उनकी 'कितना निष्ठुर यह जन समाज' शीर्षक कविता को लिया जा सकता है । कवि प्रेम के प्रति सामाजिक नजरिये का गहराई से चिंतन करते हैं और इस निष्कर्ष पर पहुचँते हैं कि –

" हा! इस समाज के कारन ही
कितने अबोध जीवन खोते
कितनी कलियाँ और पुष्प नित्य
इस बलिवेदी पर बलि होते
कलिकाओं के सिर पर चढ़ता
उस शुष्क पुष्प का प्रणय-ताज
मैं ऊब चुका इस जीवन से
जिसमें पग-पग पर दु:ख मिलें
मेरी तो इच्छा है प्रिये आओ
हम तुम कहीं दूर चलें

स्वप्नों का हो रंगीन देश

हो अस्त-व्यस्त दुर्बल रिवाज !'[6]

उनकी आरम्भिक कविताओं में बहुत सारी कविताएँ प्रेम पर हैं । 'चाँद–सितारों का वह सुन्दर देश','आ रही मुझको तुम्हारी याद','विकल वेदनाएँ', 'मेरी वो आँखें पथराई', 'मत पूछो कैसे रात कटी है मेरी', 'खिल रही चाँदनी वसुधा पर', 'दूजे को वरदान मिला क्यों', 'प्रिय तुम गेले गीत न गाना', 'अंतर नहीं दिखाया जाता' आदि कविताएँ उनकी प्रेम-भावना से संबंधित है । इन कविताओं में संयोग के सुखद क्षणों की अपेक्षा वियोग की असहनीय पीड़ा अधिक चित्रित हुई है । अपने एक लेख में अनुभा दत्त अधिकारी उनकी आरंभिक कविताओं के संबंध में लिखती है – "उनके इन गीतों (आरंभिक कविताओं) में प्रेम एक प्रधान और अनिवार्य विषय है । बल्कि यह कहना अधिक सच होगा कि उनके ये गीत अधिकतर रोमानी प्रेमगीत ही हैं । इसके अलावा कुछ नहीं । उनकी सारी कोशिश, छटपटाहट, आसक्ति, उमंग, उल्लास, आशा-निराशा, पश्चाताप सबके पीछे उनके किशोर प्रेम की सफलता असफलता काम कर रही है ।"[7]

दुष्यंत कुमार ने अपनी कई प्रेम कविताएँ अपनी पत्नी को केंद्रित करके लिखी है जिनमें प्रवास के दिनों की व्यथा मार्मिक ढ़ंग से अभिव्यक्त हुई है । 'पत्नी के प्रति–1','पत्नी के प्रति–2', 'तुम्हारी याद में पागल प्रवासी लौट आया है' आदि कविताओं में अपनी पत्नी के प्रति कवि की प्रेम-भावना को देखा जा

सकता है । 'दो लाज भरे सुरमई नयन' उनकी आरम्भिक कविताओं में अलग स्थान रखती है । विवाह के दूसरे दिन लिखी गई इस कविता में कवि ने अपनी नवविवाहिता पत्नी के अपूर्व सौंदर्य का मनोहारी चित्रण किया है ।

प्रेम-चित्रों के अलावा दुष्यंत कुमार की आरंभिक कविताओं में युगीन हलचल की गूंज भी सुनाई पड़ती है । युग की पुकार को किशोर कवि अनसुना नहीं कर पाये हैं । प्रेम के भावात्मक संसार में विचरते हुए कवि युगीन यथार्थ को गहराई से पकड़ते हैं और समसामियक जीवन-यथार्थ को चित्रित करते हैं । सन् 1946-48 के आसपास सृजित कविताओं में राजनीतिक यथार्थ का चित्रण हुआ है । राजनीतिक फलक पर यह एक ऐसा समय था जब भारतीयों की स्वाधीनता की माँग को अनसुना कर पाना सत्तासीन अंग्रेजी सरकार के लिए नामुमकिन हो रहा था । बच्चे-बूढ़े, स्त्री-पुरुष, शिक्षक-विद्यार्थी, सामान्यजन, किसान सभी का एक ही ध्येय, एक ही लक्ष्य था – भारत को आजाद कराना । इसके लिए वे तन–मन–धन सबकुछ न्यौछावर करने के लिए तैयार थें । जिसके परिणामस्वरूप भारत को 15 अगस्त 1947 को आजादी मिली । दुष्यंत कुमार की आरंभिक कविताओं में कतिपय कविताएँ ऐसी हैं जिसमें भारतभूमि की वन्दना की गई है । 'अमर है अभिमान मेरा', 'जागो देश पुकार रहा है' आदि ऐसी ही कविताएँ हैं । कतिपय आरंभिक कविताओं में आजादी का आन्नदोत्सव चित्रित

हुआ है । कवि आजादी का जश्न मनाने के साथ-साथ भारतीय जनता से एकता और भाईचारा बनाये रखने का अनुरोध करते हैं ।

भारतीय जनमानस पर गाँधीजी के मानवतावादी विचारों का व्यापक प्रभाव था । इस प्रभाव से दुष्यंत कुमार के पिता चौधरी भगवत सहाय भी अछूते न थे । वे एक सच्चे गाँधीवादी थे । कवि दुष्यंत के ऊपर अपने पिता के विचारों का प्रभाव था । वे किशोरवय से ही कुर्ता-पजामा के साथ गाँधी टोपी पहना करते थे । गाँधीजी के प्रति उनमें अगाध आस्था थी । सन् 1948 के समय लिखी गयी अधिकांश कविताओं के केंद्र में गाँधीजी हैं । गाँधीजी की अनायास हत्या से समस्त भारतवासियों के साथ-साथ कवि-हृदय भी शोक-संतप्त हो गया ।'यह बार–बार कह रहा कौन', 'आज युग का पथ–प्रदर्शक खो गया', 'सिंधु ने अपने हृदय में ज्वार लाकर', 'शोकगीत', 'वह भारत का भगवान', 'अब सुमनों की भरमार कहाँ' आदि रचनाओं में कवि गाँधीजी के व्यक्तित्व और कृतित्व पर प्रकाश डालते हैं । वे गाँधीजी को 'भारत का भगवान', 'युगावतार', 'मानवता का पथ–प्रदर्शक' आदि विशेषणों से विभूषित करते हैं ।

उनकी कुछ आरंभिक अधूरी कविताओं में लोकतंत्र की हत्या करनेवालों की असंवेदनशीलता को दर्शाया गया है । सम्पन्न वर्ग द्वारा विपन्न वर्ग का आर्थिक, मानसिक और दैहिक शोषण की प्रक्रिया निरंतर जारी है । आरंभिक

अधूरी कविताओं में 'काश मैं भगवान होता' एक महत्तवपूर्ण कविता है । इस कविता में शोषण प्रक्रिया को बेबाक बेपर्द किया गया है –

" तब न धन के गर्व में यों
सूझती मस्ती किसी को
तब न अस्मत निर्धनों की
सूझती सस्ती किसी को "[8]

स्वतंत्रता पश्चात् लिखी गई अनेकों कविताओं में राजनेता और पूजीपंति वर्ग की छद्म, स्वार्थवृति तथा चारित्रिक पतन का दृश्य अंकित किया गया है –

" साफ वस्त्र है पहिने लेकिन अंतर काले–काले हैं
जान-जान अनजान बने ये बनते भोले भाले है ।"[9]

दुष्यंत कुमार की आरंभिक कविताओं को देखकर ऐसा लगता है जैसे किशोर कवि का मन जहाँ एक ओर प्रणय जीवन के उतार-चढ़ाव से आन्दोलित हो रहा था, वहीं दूसरी ओर समाज के वीभत्स यथार्थ का भी निरीक्षण-परीक्षण कर रहा था । इस समय की कविताओं में भावातिरेक देखने को मिलता है । यह भावातिरेक कभी प्रेम जीवन की व्यथा के कारण है तो कभी समाज में रहनेवालों की त्रासदायक पीड़ा को देखकर । भावुक होते हुए भी कवि यथार्थ निरपेक्ष नहीं है । कहने का आशय यही है कि कवि दुष्यंत की कविताओं में

सामाजिक यथार्थ लेखन-कार्य के शुरूआती दौर से ही देखने को मिलता है ।

सामान्य अनुभूतियों को सार्थक और बहुआयामी सन्दर्भ प्रदान करने की कला का परिचय हमें उनकी आरंभिक कविताओं से ही मिल जाता है । होली, दीपावली, नया साल जैसे पर्व और त्यौहारों के माध्यम से कवि ने अपनी कई कविताओं में बड़ी सहजता से बेरोजगारी की त्रासदी, आर्थिक तंगी, पारिवारिक वियोग, सामाजिक विडम्बना को दर्शाया है । सन् 1950–51 के आसपास लिखी गई कविताओं में इसे देखा जा सकता है ।

दुष्यंत कुमार की आरंभिक रचनाओं पर छायावादी भाव एवं भाषा का प्रभाव परिलक्षित होता है । दुष्यंत कुमार कोमल कल्पना के कवि सुमित्रानन्दन पंत को अपना काव्य–गुरू मानते थे । वे स्वयं को एकलव्य और सुमित्रानन्दन पंत को द्रोणाचार्य मानते थे । दुष्यंत कुमार अपने गुरू श्रद्धेय श्री सुमित्रानन्दन पंत के कर–कमलों में अपना प्रथम प्रयास समर्पित करते हैं –

" कि जिसके पदाचिहों को देख
हुआ है चलने का अभ्यास
उन्हीं के चरणों में सस्नेह
समर्पित मेरा प्रथम प्रयास "[10]

दुष्यंत कुमार के प्रथम संग्रह 'सूर्य का स्वागत' के प्रकाशन के पूर्व की रचनाओं में 'विकल' उपनाम के साथ-साथ 'परदेशी' उपनाम का भी उल्लेख

मिलता है । लगता है कवि की विकलता जब समाप्त हो जाती है तब उनके मन में परदेशी बनकर काव्य-सर्जना करने की इच्छा जागृत होती है । किंतु यह परदेशी कवि अधिक दिनों तक परदेशी बनकर नहीं रह पाता है और वे दुष्यंत कुमार के नाम से काव्य-सर्जना करने लगते हैं ।

आरंभिक कविताओं में कुछेक कविताएँ मुक्त छन्द के प्रणेता महाप्राण निराला और विश्व विख्यात कृति 'रामचरित मानस' के सर्जक गोस्वामी तुलसीदास को संबोधित करके लिखी गई है । मुक्त छन्द का प्रवर्तन कर निराला ने न केवल हिन्दी भाषा को नई अर्थवत्ता दी, आने वाले रचनाकारों के लिए लेखन की नई जमीन भी तैयार कर दीं । दुष्यंत निराला के इस महत्वपूर्ण योगदान को स्मृत करते हैं । वे कवि निराला को 'नववधू हिन्दी की माँग की लाली', 'भाषा का नाज', 'हिन्दी का प्राण' संबोधित करते हुए उनके जुझारू व्यक्तित्व की प्रशंसा करते हैं । इसी तरह वे तुलसीदास को'अमर गायक' ,'मनुज के रुप में देव का अवतार' आदि कई संबोधन देते हुए उन्हें अपना अभिनन्दन स्वीकारने का अनुरोध करते हैं । इन कविताओं को पढ़कर ऐसा लगता है कि दुष्यंत कुमार इन रचनाकारों की जनोन्मुखी भावना एवं चेतना से अत्यंत प्रभावित थे ।

दुष्यंत कुमार की आरंभिक कविताओं में कुछ कविताएँ कवि-कर्म पर लिखी है । रचना कर्म के आरम्भ से ही दुष्यंत कवि कर्म की उपादेयता के प्रति गम्भीर दिखाई पड़ते हैं । 'प्रतिकूल राह', 'अब के कवियों के चाँद' जैसी

कविताओं के द्वारा कवि ने कवि-कर्म की सार्थकता,लेखनीय प्रयोजन और सामाजिक प्रभाव पर विचार करते हुए कला के लिए समर्पित अपने समकालीन कवियों की लेखनी पर प्रतिक्रिया जाहिर क्री है । कवि दुष्यंत की आरंभिक कविताएँ 'कल्पना', 'सन्मार्ग', 'झंकार' , 'दीदी' ,'अरूण', 'चिनगारी' 'निकष', 'प्रतीक' आदि पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रही थी । इन कविताओं में विविध भावों का संयोजन मिलता है । कुछेक आरंभिक कविताएँ भले ही अधूरी और काव्य शिल्प की दृष्टि से अपरिपक्व रही हो किंतु कवि के रचनात्मक विकास को समझने में ये कविताएँ सहायक हैं । इन आरम्भिक कविताओं में जो जनचेतना और राजनीतिक दृष्टि दिखाई देती है, वह परवर्ती रचनाओं में प्रौढ़ और गंभीर रूप धारण करती है । सृजन के प्रारम्भिक दौर में कवि ने 'पुकार' नामक एक मासिक पत्रिका का सम्पादन भी किया । इस कार्य में उनके सहयोगी राजकुमार राजपूत और महावीर सिंह थे । 'पुकार' के ज्यादातर अंकों में दुष्यंत कुमार की ये आरम्भिक कविताएँ छपती रहीं । कवि साहित्य और सृजन–प्रक्रिया को लेकर कितने गम्भीर और सजग है, इसका प्रमाण, इनकी आरम्भिक कविताओं से मिल जाता है । 'सूर्य का स्वागत', 'आवाजों के घेरे', 'जलते हुए वन का वसंत' जैसे कविता संग्रहों और 'साये में धूप' जैसी गज़ल संग्रहों से इतर दुष्यंत कुमार ने कुछ लम्बी कविताएँ भी लिखी हैं जो सामाजिक यथार्थ के प्रति उनके तीव्र आग्रह को दर्शाता है । इन कविताओं में सामाजिक कुटिलताओं और विद्रूपताओं के यथार्थ

को परत-दर-परत उघाड़ कर रख दिया गया है । 'परिचित आवाज', 'भूल जाने के लिए ', 'आँधी', 'इष्ट और दाय','मैं ही नहीं हूँ ', 'तीन जख्म:तीन दर्द ', 'सवाल ये है' , 'तुमने देखा', 'काव्य–कथा : चार पत्र: एक प्रसंग', 'अजायबघर में ', 'कुछ', 'अपराध' आदि ऐसी ही कविताएँ हैं । इनमें से अधिकांश कविताएँ 1960 के बाद की है । 1960 के बाद की कतिपय कविताएँ जैसे 'सत्य के लिए' बंगाल के अकाल पर केंद्रित है, वहीं 'जैसे हिमालय' शीर्षक कविता में 1962 के भारत–चीन युद्ध के औचित्य-अनौचित्य के लेकर विचार किया है । इन कविताओं में कवि की समाज-सम्बद्धता, उनकी निर्भयता और आत्मविश्वास को सहज ही रेखांकित किया जा सकता है ।

समग्रत: यही कहा जा सकता है कि उनकी कुछ कविताएँ संग्रहों से इतर होकर भी कम महत्त्वपूर्ण नहीं है । भले ही आरम्भिक कविताओं में वैचारिक गहराई नहीं हो, पर परवर्ती असंकलित कविताओं में विचारों की गहनता और जन–समर्पित रचनाकार की चिंता सर्वत्र दृष्टिगत होती है ।

2. काव्य-संग्रह

दुष्यंत कुमार के कुल तीन काव्य-संग्रह प्रकाशित हुए हैं । पहला काव्य संग्रह 'सूर्य का स्वागत' का प्रकाशन सन् 1957 में हुआ । द्वितीय काव्य संग्रह 'आवाजों के घेरे' का सन् 1963 में और तृतीय काव्य संग्रह 'जलते हुए वन

का वसंत' का सन् 1973 में प्रकाशन हुआ। दुष्यंत कुमार अपनी कृति 'साये में धूप' के लिए विशेष प्रसिद्ध है। कांतिकुमार जलते हुए वन का वसंत की महत्ता बताते हुए लिखते हैं –" 'जलते हुए वन का वसंत' दुष्यंत का सर्वाधिक महत्तवपूर्ण काव्य-संग्रह है। दुष्यंत को प्रसिद्धि और ऐतिहासिक महत्ता 'साये में धूप'–से मिली किंतु 'साये में धूप' 'जलते हुए वन का वसंत' का अनुगायन मात्र है।"[11] कहने का आशय यह है कि 'साये में धूप' ने उन्हें प्रसिद्धि की जिस ऊँचाई पर पहुँचाया, उसकी सीढ़ी उनकी आरंभिक असंकलित रचनाएँ और ये तीनों काव्य संग्रह है।

2.1 सूर्य का स्वागत

'सूर्य का स्वागत' कवि दुष्यंत कुमार का पहला काव्य–संकलन है। इसमें कुल 48 कविताएँ संग्रहित हैं, जो जीवन-संघर्ष के विविध भावों को रूपायित करती है। इसमें कहीं आस्था और अनास्था का तो कहीं जय और पराजय का द्वन्द दिखाई पड़ता है। कवि पराजित होते हैं, निराश भी होते हैं, किंतु टूटते नहीं है। उनका जुझारू व्यक्तित्व उन्हें परिस्थितियों के सामने घुटने टेकने नहीं देता। जीवन की भयावहता को देखकर कवि का विश्वास डगमगता जरूर है, पर क्षण भर के लिए। आस्था टूटती तो है, पर अनास्था में परिवर्तित नहीं होती। वास्तव में कवि दुष्यंत का यह प्रथम काव्य-संग्रह उनके अपराजेय व्यक्तित्व का साक्षात्कार

है । कवि कहते भी हैं –

" कुछ हो अब,तय है –
मुझको आशंकाओं पर काबू पाना है,
पत्थरों के सीने में
प्रतिध्वनि जगाते हुए
परिचित उन राहों में एकबार
विजय–गीत गाते हुए जाना है...
जिनमें मैं हार चुका हूँ ।"[12]

उनके इस संग्रह की महत्ता को रूपायित करते हुए धनंजय वर्मा लिखते हैं – " दुष्यंत के 'सूर्य का स्वागत' का स्वागत उस समय हुआ भी उसी गर्म जोशी से था और बहुत कम कवि समकालीन परिदृश्य में हैं जिनको अपने पहले ही काव्य-संग्रह से इतनी ख्याति और प्रतिष्ठा मिली हो ।"[13] वे इस संग्रह में निहित उस खास विशेषता की ओर ध्यान ले जाते हैं, जिसकी वजह से दुष्यंत कुमार सप्तकीय परम्परा से पृथक होकर भी अपने पाठकों के हृदय में स्थायी जगह बनाते हैं । वे लिखते हैं – "नई कविता के कँटीले तारों से घिरे क्षेत्र में पाठकों के प्रवेश–निषेध की तख्ती हटाकर उसने अपने आत्मीय-अनात्मीय संवेदनों और अनुभूतियों के जगत में सबके निर्बाध प्रवेश का आमंत्रण दिया और स्वागत किया है ।"[14]

दुष्यंत सहज और सरल कवि है । उनकी यही सहजता और सरलता नयी कविता की बौद्धिकता को चुनौती देती है । वे अपनी अनुभूति को इस आत्मीयता और ईमानदारी से अभिव्यक्त करते हैं कि वे महज 'शब्द' नहीं रह जाते, वह पाठकों की संवेदना से जुड़ जाती है । इस संग्रह की कुछ कविताओं में कवि अपनी सृजन-प्रक्रिया को रूपायित करते हैं । कवि के पास जो शब्द है, वह दर्द से निष्पन्न और भावों से आप्लावित है, वह खोटे नहीं है, बल्कि जीवन की कसौटी पर कसकर निकले हुए बिल्कुल खरे शब्द हैं, इनमें झूठी बौद्धिकता और घड़ियाली आँसू वाली संवेदनशीलता नहीं दिखाई पड़ती । इन शब्दों में ताकत हैं, जूझने की, संघर्ष करने की । ये शब्द जीवन-सत्य से परिपूर्ण है । कवि लिखते हैं–

" मेरे शब्दों ने हार जाना
क्योंकि भावना इनकी माँ है
इन्होंने बकरी का दूध नहीं पिया
ये दिल के उस कोने में जन्मे हैं
जहाँ सिवाय दर्द के और कोई नहीं रहा ।"[15]

दुष्यंत कुमार नई कविता दौर के रचनाकार है । नई कविता निराशा, कुंठा और अनास्था की कविता मानी जाती है । पर दुष्यंत कुमार की कविता अपने युग की नयी व्याख्या प्रस्तुत करती है । उनकी कविताओं में आस्था, अनास्था का दमन करती हुई दिखाई पड़ती है, वहीं पराजय बोध जय प्राप्ति की ओर अग्रसर

करती है । वे विपरीत परिस्थिति में घुटने टेकने वाले कवि नहीं हैं । यही वजह है कि नई कविता के दौर में वे 'सूर्य का स्वागत' संग्रह के सहारे निराशा के घनघोर अंधकार को चीरते हुए आशा का सूर्योदय लेकर पाठकवर्ग के समक्ष उपस्थित होते हैं । बनय सिंह 'सूर्य का स्वागत' संग्रह को नई कविता की प्रवृतियों के सन्दर्भ में परखते हुए लिखते हैं – ''दुष्यंत कुमार नयी कविता के उस स्वरूप को प्रस्तुत करते हैं जिसमें पराजय पीड़ा न देकर आगे बढ़ने का सन्देश देती है । दुष्यंत कुमार जैसे कवि की कविताएँ नयी कविता के ऊपर लगे हुए इस आरोप को झुठलाती है कि नयी कविता पराजयवादी कुंठित मनोवृतियों का पुंज है । दुष्यंत के लिए हर पीड़ा प्रेरक बनती है ।''[16]

दुष्यंत कुमार का यह संग्रह प्रकाशन के बाद सप्तकों के मानदंड को चुनौती देने में सफल रहा । इस संग्रह ने साहित्यिक दुनिया को यह दिखा दिया कि प्रतिभा किसी खेमेबाजी की मोहताज नहीं होती । वेणुगोपाल 'सूर्य का स्वागत' संग्रह की जबर्दस्त प्रशंसा करते हुए लिखते हैं – ''मैं याद करता हूँ, 'सूर्य का स्वागत' के प्रकाशन–काल को । छठा दशक ! सप्तकों का प्रायोजित हल्ला । कवि होने और माने जाने की शर्त अज्ञेय द्वारा स्वीकृत होना था और तब दुष्यंत कुमार ने अपनी उपस्थिति दर्ज कराई थी । 'सूर्य का स्वागत' के माध्यम से । क्या जबर्दस्त एण्ट्री थी कि न सूर्य किसी का मोहताज होता है और न उसका स्वागत करनेवाला । हिन्दी कविता के तत्कालीन पाठक-वर्ग ने अविश्वास भरी आँखों से

अपने ठीक सामने देखा कि सप्तकों के बाहर बिना अज्ञेय की परवाह किये,ऐसी कद–काठी की कद्दावर कविता संभव हो रही है, जो नयी कविता के सारे शीत युद्धीय दोषों से मुक्त है ।"[17]

इस संग्रह की कविता 'सूर्य का स्वागत' एक महत्वपूर्ण कविता है । अनास्था के मध्य से उत्पन्न आस्था और निरस्त विश्वास के बीच से उदित विश्वास का प्रतीक सूर्य जब कवि के आँगन में खुरचे हुए काई पर सहजता से चढ़ आता है, तब अँधेरे के आदी कवि अपनी सारी अकर्मण्यता और निराशा को विस्मृत कर उत्साह और प्रसन्नता के साथ सूर्य का स्वागत करने लगते हैं । यह कविता सामाजिक यथार्थ को व्यंजित करती है । काई की अधिकता से काली और सीलन हो चुकी दिवारों के बीच जीवन यापन की प्रक्रिया अत्यंत त्रासदायक है । इस त्रासद स्थिति से मुक्त न होने की पीड़ा और भी त्रासदायक है, किंतु कवि जानते हैं कि स्वार्थपूर्ण सामाजिक व्यवस्था कभी भी उन्हें इस स्थिति से नहीं निकालेगी । ऐसी स्थिति में सूर्य को काई और सीलन भरी दिवार पर चढ़ता देख कवि के भीतर आशा का संचार होता है और कवि उत्साहित होकर उसके स्वागत के लिए दौड़ पड़ते हैं ।

सामाजिक और राजनीतिक यथार्थ को इस संग्रह की कई कविताओं में उजागर किया गया है । इस संग्रह की एक महत्वपूर्ण कविता है – तीन दोस्त । ये तीन दोस्त हैं – दुष्यंत कुमार, मार्कण्डेय और कमलेश्वर । मानवता का हनन

करनेवाली शक्तियों को धराशयी करनेवाले ये 'त्रयी' हमेशा आम जन की भलाई के लिए समर्पित रहते थें –

" हम हर जगह जहाँ पर मानव रोता है
अत्याचारों का नंगा नर्तन होता है
आस्तीनों को ऊर कर निज मुट्ठी ताने
बेधड़क चल जाते हैं लड़ने मर जाने
हम जो दरार पड़ चुकी सांस से सीते हैं
हम मानवता के लिए जिन्दगी जीते हैं ।"[18]

हमेशा से कवि के लिए मानवीय चेतना सर्वोपरि रही है । इसी वजह से वे मानव मात्र के लिए मर मिटने वालों के साथ सहज ही हृदय से जुड़ जाते हैं । यह कविता कवि की मानवीय चेतना को स्पष्ट करती है । आम आदमी के साथ जुड़कर ही कवि का 'प्राणहीन तन' 'पूर्णत्व' का अहसास प्राप्त करता है, वे अपनी लेखनी की सार्थकता आम आदमी की व्यथा-कथा की अभिव्यक्ति में मानते हैं । वे आम आदमी के साथ हृदयस्थ जुड़ाव रखना चाहते हैं । उनकी 'पर न जाने क्यों', 'मंत्र हूँ' जैसी कविताएँ उनकी इसी आंकाक्षा को अभिव्यक्त करती है । 'समय', 'उबाल', 'सत्य बतलाना' जैसी कतिपय रचनाओं में कवि का आक्रोश चित्रित हुआ है । 'सूर्य का स्वागत' संग्रह की कुछ कविताओं में प्रेम के पूर्व–स्मृतियों के चित्र भी रेखांकित हुए हैं । इन कविताओं में किशोरसुलभ

भावुकता के स्थान पर गम्भीरता है । 'सूचना', 'प्रेरणा के नाम' ,'संतोष' ,'दो पोज', 'वासना का ज्वार' आदि कविताओं में प्रेम और सौंदर्य के कई चित्र खींचे गये हैं ।

दुष्यंत कुमार किसानी संस्कार वाले रचनाकार है । गाँव के साथ वे गहराई से जुड़े हुए थें । गाँव की पतनोन्मुख संस्कृति को देखकर उन्हें ठेस पहुँचती है । गाँव भी अब अंधी आधुनिकता की चपेट में आ गए हैं । गाँव की सहजता, सरलता, आडम्बरहीनता सब आधुनिकता की चाह में लुप्त हो रही हैं । अजबनियों का सहर्ष आतिथ्य जो ग्रामीण जीवन की पहचान हुआ करती, वह पहचान अब लुप्त होती जा रही है । अलगाव के जहर से ग्रामीण परिवेश भी विषाक्त हो चुका है । उनकी कतिपय कविताएँ ग्रामीण परिवेश से लुप्त हो चुकी सहजता, सरलता और आत्मीयता की व्यथा-कथा को मार्मिक ढ़ंग से रूपायित करती है । 'यह क्यों', 'कागज की डोंगियाँ' आदि कविताओं में ग्रामीण परिवेश के शहरी बनने की प्रक्रिया को कवि ने विस्तार से चित्रित किया है ।

इस संग्रह की अनेक रचनाओं में दार्शनिक पुट भी दिखाई पड़ता है । 'मैं और मेरा दुःख', 'धर्म', 'कैद परिन्दे का बयान','दिग्विजय का अश्व' ऐसी ही कविताएँ हैं । 'इनसे मिलिए' इस संग्रह की एक सहजाकर्षक कविता है । कवि बड़े ही सहज ढ़ंग से अपना नख-शिख वर्णन करते हैं । कवि की यह भावगत सहजता ही उनके कवि व्यक्तित्व की पहचान है । इस संग्रह के बारे में कवि दिनकर का

मानना था कि 'सूर्य का स्वागत' संग्रह एक विशेष प्रकार की ताजगी लेकर पदार्पित हुई । उसकी सुगंध ने प्रयोगवादियों के सड़ांध से बचाने में अहम् भूमिका निभाई -''प्रयोगवादियों की सड़ाँध से बचने के लिए इस गुलाब को सूँघना जरूरी है । ''[19]

कुल मिलाकर यही कहा जा सकता है कि दुष्यंत कुमार का यह संग्रह बौद्धिक नीरसता के बीच जीवनगत यथार्थ को लेकर आया । कवि अपने लेखन कर्म को लेकर कितने सजग है, यह इस संग्रह की कविताओं से प्रमाणित हो जाता है । कवि का यह संग्रह उनकी अपराजेय आस्था और जुझारू व्यक्तित्व का प्रतिफलन है ।

2.2 आवाजों के घेरे

अब तक कवि दुष्यंत की कई रचनाएँ 'कल्पना', 'ज्ञानोदय', 'धर्मयुग' आदि पत्रिकाओं में छप चुकी थी और उनके प्रथम काव्य-संग्रह 'सूर्य का स्वागत' का पाठकों और आलोचकों द्वारा गर्मजोशी के साथ स्वागत भी हो चुका था । साहित्यिक जगत में उनके प्रथम काव्य-संकलन की धूम मची हुई थी । वे पाठक वर्ग के लिए एक सुपरिचित चेहरा बन चुके थें । सबसे बड़ी बात यह थी कि सप्तकीय परम्परा से पृथक होने के बावजूद वे अपने समकालीनों के सामानांतर ख्याति प्राप्त कर रह थें । साहित्य-जगत में वे एक महत्वपूर्ण एवं विशिष्ट कवि के

पद पर विराजमान हो चुके थें । 'आवाजों के घेरे' दुष्यंत कुमार का दूसरा काव्य–संकलन है । इसका प्रकाशन 1963 में हुआ । इस संग्रह में कतिपय प्रकाशित कविताएँ भी संग्रहित हैं । इस संग्रह की कविताओं को पढ़कर ऐसा लगता है कि कवि की जन–प्रतिबद्धता समाज के विरोधी चरित्र को देखकर और अधिक पुख्ता हो चुकी है । आहत मानवता के स्वर को सुनकर कवि के लिए मौन साध लेना असम्भव हो गया है –

" मौन साध लेता कैसे
रखकर मुँह में जुबान
प्रश्न जब सुने
आहत, विह्वल मनुष्यता के
उत्तर में मुझसे चुप रहा नहीं गया ।"[20]

'आवाजों के घेरे' संग्रह की कविताओं को पढ़कर ऐसा प्रतीत होता है कि कवि की सृजनात्मकता निरंतर मुखर होती जा रही है । कवि अपने ही बनाये हुए घेरे का अतिक्रमण कर सारे संसार के साथ खुद को जोड़ते हैं और नि:शब्द अत्याचार सहनेवालों की अंतहीन पीड़ा को शब्दबद्ध करते हैं । यह संग्रह उनके संघर्ष को चरितार्थ करती है । दुष्यंत कुमार का यह संग्रह उनके विद्रोही तेवर का प्रमाण है । इस संग्रह की कविताओं से निराशा का स्वर लुप्त है । कवि ने लिखा भी है –

" कुंठित शस्त्र भले हों हाथों में
लेकिन लड़ता हुआ मरूँ मैं ।"[21]

इस संग्रह की कविताएँ कवि के आक्रोश, आत्मविश्वास, छटपटाहट और क्रांति चेतना को अभिव्यक्ति प्रदान करती है । रोमानी दुनिया से निकलकर यथार्थ की तपती धरती पर पैर रखते ही कवि बापू की तरह 'करो या मरो' की स्थिति में आ जाते हैं । 'दृष्टांत','आग जलती रहे','अच्छा–बुरा','विवेकहीन', 'साथियों से' आदि रचनाओं को देखकर ऐसा लगता है कि कवि अन्याय को प्रश्रय देनेवाली शक्तियों को नेस्तानाबूद करने के लिए पूरी तरह से कृतसंकल्प है । इस संग्रह में कवि की क्रांति–भावना देखते ही बनती है । कवि अन्याय सहनेवालों के प्रति सहानुभूति और आत्मीयता जताते हुए पूछते हैं –

" कौन सा सुनसान तुमको कोंचता है
कहो, बढ़कर उसे पी लू
या अधर पर शंख-सा रख फूँक दूँ
तुम्हारे विश्वास का जय–घोष
मेरे साहसिक स्वर में मुखर है "[22]

'आवाजों के घेरे' संग्रह का अवलोकन कर कांतिकुमार लिखते हैं – " 'आवाजों के घेरे' की कविताओं में दुष्यंत ने अपने ही बनाए हुए घेरे को तोड़ने में सफलता प्राप्त की है । इस संग्रह में घायलों और पीड़ितों की आवाजें देखी जा सकतीं हैं ।

कवि स्थान–स्थान पर अंधकार की हदों को चीरता हुआ दिखाई पड़ता है ।''[23]

इस संग्रह की 'गली से राजपथ तक', 'आत्मकथा' जैसी कविताओं में राजनीतिक विद्रूपता को प्रभावशाली तरीके से चित्रित किया गया है । राजनेताओं की छद्मता और झूठी सहानुभूति से कवि अच्छी तरह परिचित थे । इस संग्रह की कई कविताओं में वे राजनेताओं के दोहरे मुखौटे को उधारते हुए नजर आते हैं । इस संग्रह की 'राह खोजेंगे' ऐसी ही एक रचना है जिसमें कवि कर्णधारों के दोहरे व्यक्तित्व का उद्घाटन करते हैं –

'' अँधेरे व्यक्तित्व को अंधी गुफाओं में
रोशनी का आसरा देकर
बड़ी आयोजना के साथ पहुँचाया
और अपने ही घरों में कैद करके कहा:
'लो तुम्हें आजाद करते हैं ।'[24]

राजनीतिक यथार्थ को कवि ने यहाँ बेबाक रुप में प्रकट किया है । शोषकों की चालाकियों को उघारने में कवि दुष्यंत बेहद पटु है । यह कविता इसका साक्ष्य है ।

गीत को जन्म देने की प्रक्रिया एक दर्दनाक प्रक्रिया है । वैसे भी सृजन प्रक्रिया एक कष्टसाध्य प्रक्रिया होती है । गीत का जन्म एक या दो दिन में नहीं होता । भावनाओं के जख्मी कोख में पड़ी गीत अभिव्यक्ति के लिए छटपटाती

है, घुटती है, लड़ती है, सृजनकार को अभिव्यक्ति के लिए विवश करती है, तब जाकर उसका सृजन होता है । दुष्यंत कुमार की कतिपय संग्रहित कविताएँ गीत की जन्म प्रक्रिया और उसके प्रभावोत्पादकता पर विचार करती है । 'गीत का जन्म', 'विवश चेतना' 'आवाजों के घेरे','असमर्थता' आदि कविताएँ इसके उदाहरण है । 'गीत का जन्म' शीर्षक कविता में कवि लिखते है –

" मेरी भावनाओं की जख्मी कोख में
कोहनियाँ टिकाकर
नन्हें नाखूनों से खरोंचकर
लगातार छोटे–छोटे पाँवों से प्रहार कर
विवश कर दिया था इसने बंध्या अभिव्यक्ति को ।
और मुझे लगता है
अपने जनम के लिए शायद सब गीत
इसी तरह घुटते हैं
इसी तरह लड़ते है "[25]

इस संग्रह की कुछ कविताएँ में दिवंगत बापू को स्मरण किया गया है । 'गांधीजी के जन्मदिन पर' ऐसी ही एक रचना है । कवि बापू के पुर्नजन्म की परिकिल्पना करते हैं ताकि समाज में फैली हुई अमर्यादा, हिंसा, कराह, विवशता, कातरता, चुप्पी मिटे और रामराज्य की स्थापना हो जाये ।

इस संग्रह की कुछ कविताएँ प्रेम की पीड़ा को व्यंजित करती हैं। अपने घर–परिवार से दूर होकर कवि को एकाकीपन का एहसास पीड़ा से भर देता है। 'सूना घर' कविता में इसी एकाकीपन की पीड़ा को अभिव्यक्ति मिली है। इसी तरह 'अपनी प्रेमिका से', 'छत पर:एक अनुभूति','दो मुक्तक','घूमने अकेले','अबोध शाप' आदि कविताओं में प्रेम की वियोगजन्य स्थिति का मार्मिक अंकन हुआ है। छायावादी कंवि महाप्राण निराला की सरस्वती वन्दना बहुत चर्चित रही है। निराला की तरह कवि दुष्यंत कुमार भी सरस्वती-वन्दना करते हुई नजर आते हैं। कवि 'सरस्वती–वन्दना' शीर्षक कविता में ज्ञान की देवी माँ सरस्वती से अपने धृष्ट, उद्धत, दुस्साहस-युत आचरण के लिए क्षमा-याचना करते हुए दिखाई देते हैं। इस संग्रह की एक उल्लेखनीय कविता है – 'परम्परा-वियुक्त'। परम्परा के सार्थक मूल्यों को विस्मृत कर नई पीढ़ी किस तरह अकारण दु:ख झेलती है, इसे इस कविता द्वारा समझा जा सकता है। कमलेश्वर दुष्यंत कुमार के अभिन्न मित्र थे। अपने इस अभिन्न मित्र को सम्बोधित करके कवि ने 'एक मित्र के नाम' शीर्षक कविता लिखी है जो इस संग्रह में संग्रहित है। इसी तरह 'गौतम बुद्ध से' कविता में कवि साम्प्रतिक भयावह जीवन-यथार्थ के मध्य 'अष्टांगिक मार्ग' और 'निर्वाण' की उपोगिता पर कई प्रश्न उठाते हैं।

अस्तु, कवि का यह संग्रह उनके आशावादी दृष्टिकोण और जुझारू व्यक्तित्वका परिचायक है। कवि युगीन संवेदना को व्यक्त करने में सफल रहे हैं।

वे अन्याय का प्रतिवाद करने के लिए आम नागरिक को जागरूक करते हैं । दुष्यंत कुमार का यह संग्रह विविध विषयों पर आधारित है । विषय चाहे जो भी हो, कवि की वैचारिकता उसमें दिखाई देती है ।

2.3 जलते हुए वन का वसंत

जलते हुए वन का वसंत दुष्यंत कुमार का तीसरा काव्य-संग्रह है । इस संग्रह में कवि का नया तेवर दिखायी पड़ता है । सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक क्षेत्र में बढ़ती हुई अराजकता और असंतोष को देख कर कवि के मन में व्यवस्था के प्रति गहरा आक्रोश और विद्रोह उत्पन्न होता है । समाज के इस जनविरोधी आचरण के उपचार हेतु कवि अपनी भाषा को नीम के कसैले स्वाद में परिवर्तित कर देते हैं –''एक नीम का स्वाद मेरी भाषा बना / जो सिर्फ तल्खी क़ा नाम है ।''[26] दुष्यंत कुमार का यह पहला काव्य–संग्रह है, जिसमें उन्होंने भूमिका लिखकर पाठक वर्ग के साथ संवाद कायम करने की चेष्टा की है । उनकी यह भूमिका उनके रचना-कर्म की सामाजिक सोद्देश्यता और आम–जन के प्रति उनकी प्रतिबद्धता को जाहिर करती है – ''ये कविताएँ इसी हद तक मेरी हैं कि मैंने इन्हें लिखा और भोगा है । यदि आपको इनमें पहचाना-सा स्वर, आत्मीय-सी भाषा और अपनी-सी बात नजर आए तो यह मेरी सफलता है । मेरे पास कविताओं के मुखौटे नहीं हैं । अंतर्राष्ट्रीय मुद्राएँ नहीं हैं और अजबनी शब्दों का लिबास नहीं है ।

मैं एक साधारण आदमी हूँ और इतिहास और सामाजिक स्थितियों के सन्दर्भ में, साधारण आदमी की पीड़ा, उत्तेजना, दबाब, अभाव और उसके संबंधों के उलझावों को जीता और व्यक्त करता हूँ।"[27] कविता किस तरह से उनके लिए राजनीतिक, सामाजिक और वैयक्तिक, हर स्तर, हर लड़ाई में सबसे भरोसेमंद हथियार रही है, इस संग्रह की कविताओं से जाना जा सकता है । कवि कविता रूपी हथियार से सामाजिक विषमता, अन्याय, धोखाधड़ी, वैषम्य को दूर करने के लिए पूरी तरह से प्रतिबद्ध है । इस संग्रह की कविताएँ युगीन राजनीतिक परिदृश्य को व्यापक फलक पर चित्रित करती है । इस संग्रह की अधिकांश कविताएँ राजनीतिक हैं । राजनेताओं से कवि का करीबी रिश्ता रहा है । राजनेताओं के चरित्र की विलक्षणता को रेडियो की नौकरी के दौरान साक्षात्कार लेते हुए कवि ने अच्छी तरह से जाना और परखा था । उनकी शहदमिश्रित वाणी के अन्दर छिपे कड़वेपन से कवि भलीभाँति परिचित हुए थें । इस संग्रह के बारे में विजयबहादुर सिंह लिखते हैं – "राजधानी भोपाल और प्रदेश शासन की ठीक नाक के नीचे रहने वाले दुष्यंत ने उसी शासन के खिलाफ अपनी आवाज बुलन्द करनी शुरू की जो अप्रत्याशित रूप से क्रूर और हिंसक हो उठा था । जो कविताएँ इन दिनों लिखी जा रहीं थीं, वे बाद में 'जलते हुए वन का वसंत' में सन्'73 में संगृहीत होकर हिन्दी पाठकों तक पहुँची ।"[28] आलोचक के कथन से स्पष्ट है कि दुष्यंत के इस संग्रह में उनकी विद्रोही चेतना पराकाष्ठा पर है । इस संग्रह के माध्यम से कवि ने

आजादी के बाद के भारतीय समाज की क्रूर और हिंसक स्थिति की वास्तविकता की पड़ताल करने की चेष्टा की है ।

इस संग्रह की कतिपय कविताओं में कवि का नया रूप दृष्टिगत होता है । कवि चारों ओर की अराजक स्थिति को देखकर गाते-गाते चिल्लाने लगते हैं । गाते–गाते कवि का चिल्लाना वर्तमान व्यवस्था के प्रति उनकी असंतुष्टि को दर्शाता है । वे समाज के कर्णधारों द्वारा समाज को नष्ट करने की प्रक्रिया देखकर स्तब्ध हैं । समाज के तथाकथित रक्षक ही भक्षक बने हुए हैं । इन भक्षक रूपी रक्षकों के प्रति कवि ने कई कविताओं में तीखी प्रतिक्रिया जाहिर की हैं । कवि 'गाते-गाते' शीर्षक कविता में इनके प्रति व्यंगात्मक आभार प्रकट करते हैं–

" तुम्हारा आभारी हूँ रहनुमाओ!
तुम्हारी बदौलत मेरा देश,
यातनाओं से नहीं,
फूलमालाओं से दबकर मरा है ।"[29]

'सुबह : समाचार-पत्र के समय','आत्मालाप' ,'देश–प्रेम' 'जनता', 'तुलना', 'मंत्री की मैना',' एक चुनाव-परिणाम' ,'सवाल', 'युद्ध और युद्ध-विराम के बीच' आदि कविताओं में राजनीतिक सच्चाई तल्खी के साथ प्रकट हुई है । कवि राजनेताओं के दोहरे चरित्र को बेबाकी से उजागर करते हुए दिखते हैं ।

इस संग्रह में कवि ने कई समसामयिक ज्वलंत मुद्दों को उठाया है । बस्तर गोलीकांड पर लिखी गई कविता 'ईश्वर को सूली' इस संग्रह की अतिमहत्तवपूर्ण कविता है । कवि की निर्भयता और सामाजिक चिंता इस कविता में व्यापक रूप में उभरकर सामने आई है । बस्तर के आदिवासी नागरिकों के लिए राजा प्रवीरचन्द भंजदेव भगवान के समान थे । इस भगवान की तत्कालीन सरकार ने नियोजित ढ़ंग से एक गोलीकांड में हत्या करवा दी । सरकार द्वारा कराये गये इस नृशंस गोलीकांड पर इस जनकवि का आक्रोश इतने तीखे रूप में व्यक्त हुआ कि कवि को अपनी सरकारी नौकरी से निकाले जाने का डर भी नहीं रहा । इस कविता के बारे में कांतिकुमार लिखते हैं–" 'ईश्वर को सूली' वह कविता है जिसमें दुष्यंत वैयक्तिक बोध को सूली पर टाँगकर सामाजिक बोध के मसीहा बन जाते हैं ।"[30] दुष्यंत कुमार ने इस विषय को केंद्रित करके एक आलेख भी लिखा है जिसका शीर्षक है –'बस्तर: अविश्वास का श्रोत' । इस आलेख में उन्होंने आदिवासियों के भगवान कहाये जाने वाले प्रवीर भंजदेव और राजनीतिक द्वंद्व के कारणों पर विस्तार से चर्चा की है ।

'जलते हुए वन का वसंत' संग्रह की कविताओं में सामान्य जन की बेबसी, लाचारी को देखकर कवि हृदय में जो छटपटाहट होती है, उसे देखा जा सकता है । कवि ने भूमिका में ही स्पष्ट कर दिया है कि उनके लिए मनुष्य मात्र की अवमानना असहनीय है । आम आदमी की पीड़ा कवि को भीतर तक पीड़ित

करती है । 'कवि-धर्म' ,'एक सफर पर', 'परिचित आवाज' 'ईश्वर को सूली' 'जनता','तीन जख्म : तीन दर्द' , 'गाते-गाते','मंत्री की मैना' इस संग्रह की ऐसी कविताएँ हैं, जिनमें जीवन यथार्थ को कवि ने तल्खी के साथ प्रस्तुत किया है । 'स्व' की प्रमुखता ने आदमी को सम्पूर्ण रूप से बदल कर रख दिया है । आत्मीय संबंध, लगाव, संवेदना, सहानुभूति जैसे मूल्य धराशायी हो रहे हैं । मूल्यों का विघटन हो रहा है । भौतिकता के पीछे अंधी दौड़ लगाता हुआ मनुष्य मूल्यों को दरकिनार करने के कारण दिगभ्रमित है । इस संग्रह की कतिपय कविताएँ आधुनिकता की चकाचौंध से ग्रसित आधुनिक जीवन शैली, आचार–विचार, रहन–सहन आदि को रेखांकित करती है । 'कहाँ से शुरू करें यात्रा' ,'यात्रानुभूति' 'एक समझौता' 'अस्ति–बोध' आदि इसी तरह की रचनाएँ हैं ।

दुष्यंत कुमार ने लोकतंत्र के चौथे स्तम्भ अर्थात् मीडिया में व्याप्त भ्रष्टाचार पर भी लेखनी चलाई है । जन सरोकारों को विस्मृत कर मीडिया भी नेताओं की तरह अपना स्वार्थ सिद्ध करने में व्यस्त है । वे वही प्रचारित कर रहे हैं, जो स्वार्थी नेता और पूँजीपति प्रचारित करवा रहे हैं । 'सुबह : समाचार–पत्र के समय', 'देश–प्रेम' जैसी रचनाओं में मीडिया की सच्चाई को उजागर किया गया है । इस संग्रह के बारे में गणेश तुलसीराम अष्टेकर ने लिखा हैं –''यह समूचा खंड एक विशेष तरह की जीवन-दृष्टि की छाप पाठकों के मन-अंत:करण पर अंकित कर जाता है । कुछ विशेष धारणाओं को उपजाता और दृढ़ कर देता है । कुछ

वैचारिक दिशाओं का संकेत कर उन दिशाओं में सोचने के लिए पाठकों को प्रेरित करता है । इस खंड की सबसे बड़ी विशेषता यही कही जा सकती है कि इसकी कविताओं का अवर समाजोन्मुखी चिंतन का है । इसमें यदि कुछ वैयक्तिकता भी है तो वह भी सामाजिकता में पर्यवसनीय ही है ।''[31]

कुल मिलाकर इस संग्रह के बारे में यही कहा जा सकता है कि यह संग्रह कवि दुष्यंत के विद्रोही तेवर और अपराजेय आस्था का परिचायक है । इस संग्रह की कविताओं की प्रेरणा भारत-चीन संघर्ष, नेहरू की मृत्यु के पश्चात् की चुनाव-प्रक्रिया, समाजवाद का धराशयी होना और सत्तासीन सरकार का जनता को झूठा आश्वासन देकर भरमाना आदि है । इन सब ने मिलकर दुष्यंत कुमार के कवि को आक्रोशित कर दिया जिसकी प्रतिक्रिया उनका यह संग्रह है ।

3. गज़ल-संग्रह

गज़लकार के रूप में दुष्यंत कुमार का पदार्पण हिन्दी गज़ल के विकास और समृद्धि के लिए एक युगांतकारी घटना थी । उनकी मृत्यु अल्पवय में ही हो गयी थी । लेखन के अल्पकाल में ही 'साये में धूप' जैसी कृति देकर उन्होंने हिन्दी गज़ल साहित्य को नई अर्थवत्ता और पहचान दी । यह उनका एकमात्र गज़ल-संग्रह है । इस संग्रह के द्वारा दुष्यंत हिन्दी गज़ल को सामाजिक यथार्थ से जोड़ते हैं । गज़ल विधा को अपनाने के पीछे उन्होंने तर्क दिया– ''मैं महसूस करता

हूँ किसी भी कवि के लिए कविता में एक शैली से दूसरी शैली की ओर जाना कोई अनहोनी बात नहीं बल्कि एक सहज और स्वाभाविक प्रक्रिया है । किंतु मेरे लिए बात सिर्फ इतनी नहीं है । सिर्फ पोशाक या शैली बदलने के लिए मैने गजलें नहीं कहीं । उसके कई कारण हैं जिनमें सबसे मुख्य है कि मैंने अपनी तकलीफ को...उस शदद तकलीफ, जिससे सीना फटने लगता है, ज्यादा से ज्यादा सच्चाई और समग्रता के साथ ज्यादा से ज्यादा लोगों तक पहुँचाने के लिए गज़ल कही है ।"[32]

उर्दू गज़ल की परम्परागत परिपाटी का त्याग करते हुए दुष्यंत कुमार ने गज़ल को इश्क़ और माशूक की रंगीन और सीमित दुनिया से उबारकर जीवन यथार्थ की कठोर और व्यापक दुनिया से परिचय करवाया । गज़ल के कथ्य में परिवर्तन कर दुष्यंत ने गज़ल को नई दिशा दी है । उनकी गज़लों के बारे में कमलेश्वर लिखते हैं – "दुष्यंत कुमार की गज़लों ने एक बड़ी और ऐतिहासिक भूमिका निभाई है, और वह है सांस्कृतिक और इंसानी मूल्यों के एकीकरण और भाषायी सरमाए को साथ लाने की भूमिका । XXX नाजिम हिकमत, पाब्लो नेरूदा की कविताएँ अपने देशों में जो और जितना कर सकीं, उससे कहीं ज्यादा दुष्यंत की गज़लों ने भारतीय लोकतंत्र को बचाने में की है ।"[33] दुष्यंत कुमार ने अपनी गज़लों के द्वारा भारतीय समाज के जनविरोधी सूरत को बदलने की कोशिश की है । अपनी गज़लों का उद्देश्य बताते हुए वे लिखते हैं –

" सिर्फ हंगामा खड़ा करना करना मेरा मकसद नहीं,
मेरी कोशिश है कि ये सूरत बदलनी चाहिये ।
मेरे सीने में नहीं तो तेरे सीने में सही,
हो कहीं भी आग, लेकिन आग जलनी चाहिए ।"[34]

इसमें कोई शक नहीं कि गज़लकार अपने इस उद्देश्य की पूर्ति में पूरी तरह से सफल हुए हैं । उनकी गज़लें समसामयिक जीवन-सन्दर्भों को अभिव्यक्त करने में पूर्णत: सक्षम हुई हैं । इस संग्रह की प्रथम गज़ल ही सामाजिक यथार्थ को चित्रित करती है । मानवीय शोषण, उत्पीड़न, अभाव, बेबसी को अभिव्यक्त करके दुष्यंत कुमार ने आजादी पश्चात् के 'चिथड़े हुए हिन्दुस्तान' की सच्ची तस्वीर उकेरी है । आपातकाल को लेकर दुष्यंत कुमार ने अपने इस संग्रह में जो कुछ लिखा है, वह अनूठा है । तत्कालीन सरकार की नीतियों की आलोचना करने का जो साहस उस समय दुष्यंत कुमार कर पाए ,वह बड़े-बड़े दिग्गज कवि भी नहीं कर पाये । वे अपनी गज़लों द्वारा बड़ी खूबसूरती से तत्कालीन सरकार की नाकामी को जाहिर कर देते हैं –

" इस कदर पाबन्दी-ए-मजहब कि सदके आपके,
जब से आजादी मिली है मुल्क में रमजान है ।"[35]

इस संग्रह में दुष्यंत कुमार आम आदमी की पीड़ा और संघर्ष को साकार कर देते हैं । लोकतंत्र में आमजन भूख और गरीबी के कारण दम तोड़ने को

बाध्य है । सामान्यजन अपने कीमती वोट के एवज में खून चूसने वाले नेताओं को कुर्सी पर बैठाकर जीवन भर के लिए अभिशप्त हो जाता है । लोकतंत्रीय संविधान की विडंबना को इस संग्रह में गज़लकार ने बखूबी अंकित किया है ।

दुष्यंत कुमार के इस संग्रह में वैविध्य और विद्रोही तेवर दृष्टिगत होता है । सांस्कृतिक विघटन और नैतिक अवमूल्यन के कई चित्र हमें इस संग्रह में मिल जाते हैं । भोगवादी संस्कृति के वर्चस्व से एक ऐसी तहजीब को महत्ता मिलने लगी, जिसने आदमी को नरभक्षी बनाकर रख दिया है –

" अब नई तहजीब के पेशे-नजर हम,
आदमी को भूनकर खाने लगे हैं ।"[36]

सरदार मुजावर दुष्यंत कुमार की गज़लों के बारे में अपने विचार प्रकट करते हुए लिखते हैं – "जहाँ उन्होंने अपनी गज़लों के माध्यम से व्यक्ति एवं समाज की आँखें खोलने का प्रयास किया है, वहाँ उन्होंने समाज की बुराइयों को खत्म करने के लिए क्रांति की बात भी कही है । नि:सन्देह उनकी हर गज़ल हमें एक मशाल की तरह नजर आती है जिसके प्रकाश में चाहे व्यक्ति हो अथवा समाज हो – दोनों ही विकास के पथ पर अग्रसर हो सकते हैं ।"[37]

दुष्यंत कुमार अपने गज़ल संग्रह में संसद के पाखंड को जगह-जगह अनावृत्त करते हैं । वह आम आदमी, जो समाज का वृहत्तर और लोकतंत्रीय संविधान का सबसे महत्त्वपूर्ण अंग है, समाज व्यवस्था में हमेशा हाशिये पर रहता

है । उसे लेकर संसद में कई तरह के ताम-झाम किये जाते रहे हैं, पर उनकी स्थिति ज्यों की त्यों बनी रहती है । उनके इस गज़ल-संग्रह की एक अन्यतम विशेषता इसकी व्यंग्यात्मकता है । गज़लकार ने बड़ी धारदार शैली में दोहरा चरित्र धारणकर अन्याय एवं अत्याचार करने वालों की खबर ली है । युग-सत्य और युग-बोध उनके इस संग्रह में पूरी तरह से परिलक्षित होता है ।

निष्कर्षत: यह कहा जा सकता है कि गज़ल लिखकर दुष्यंत कुमार ने हिन्दी पाठकों को उपकृत किया है । उन्होंने गज़ल का जो रूप हमारे सामने रखा, वह अकल्पनीय था । सबसे बढ़कर आपातकालीन तानाशाही की दुष्यंत कुमार ने जिस बैखोफ और बेबाक तरीके से आलोचना की है, वह अतुलनीय है । दुष्यंत कुमार ने गज़ल को समसामयिक सन्दर्भो से संयुक्त कर उसे नई अर्थवत्ता प्रदान की है । उनकी गज़लों में इतना जबर्दस्त आकर्षण है कि नेता, विद्यार्थी, फिल्म लेखक सभी उनके शे'रों को अपनी बात में शामिल करते हैं । उनकी गज़लें क्रांति का स्वर मुखरित करती है । दिशाहारा को दिशा दिखाती है और भटकों को सही रास्ते पर लाती है । दुष्यंत कुमार ने अपने सृजन के बारे में ठीक ही लिखा है–

" मेरे गीत तुम्हारे पास सहारा पाने आएँगे ,
मेरे बाद तुम्हें ये मेरी याद दिलाने आएँगे ।"[38]

4. गीति नाट्य

'एक कंठ विषपायी' दुष्यंत कुमार का एकमात्र गीति-नाट्य है । यह गीति-नाट्य शिव और सती के प्रेम तथा सती-दाह के पौराणिक प्रसंग पर आधारित है । दुष्यंत कुमार ने इस पौराणिक गीति-नाट्य को समकालीन सच्चाईयों से सम्बद्ध करके इसे व्यापक आयाम प्रदान किया है । इस गीति-नाट्य के बारे में दुष्यंत कुमार ने देवीदास शर्मा को एक पत्र लिखा था जिसमें वे इस नाटक के कथ्य पर प्रकाश डालते हुए लिखते हैं – " 'एक कंठ विषपायी' पौराणिक आख्यान पर आधारित होते हुए भी अपनी एप्रोच में आधुनिक है । उसमें कई प्रश्न एक साथ उठाये गये हैं । आधुनिक प्रजातांत्रिक पद्धति की शिथिलता...शासन या सत्ता की व्यक्तिगत सनक या लिप्सा के कारण युद्ध...युद्ध का औचित्य और उससे घुटता–टूटता हुआ सामान्य आदमी जिसका प्रतीक सर्वहत है लेकिन उसकी मूल संवेदना यह है कि परम्परा से जुड़ा हुआ व्यक्ति या समाज...उस परम्परा के टूटने को या जोड़े जाने को सहज स्वीकार नहीं करता, वह या तो विक्षुब्द और कुपित हो उठता है या स्वयं टूटता है XXX किंतु जो महान व्यक्तित्व होते हैं वे परम्परा से कटकर नये मूल्यों को अंगीकार कर लेते हैं । शंकर ने जिस प्रकार थोड़े ही समय में नयी स्थितियों को स्वीकार किया ... इसलिए उन्हें एक कंठ विषपायी कहा गया है ।"[39] दुष्यंत कुमार की मान्यता है कि परम्परा के जर्जर और अनुपयोगी होने के उपरांत उसको त्यागकर नये मूल्यों को सहर्ष स्वीकार कर लेने में ही व्यक्ति और

समाज की भलाई है । यह सत्य है कि परिवर्तन को स्वीकार करना किसी के लिए भी सहज नहीं होता किंतु परिवर्तन जड़ता को समाप्त करने के लिए अनिवार्य होता है । परिवर्तन प्रकृति का शाश्वत नियम है । सभ्यता और संस्कृति का विकास परिवर्तन से ही होता है । इस काव्य-नाटक में परम्परावादी मानसिकता और आधुनिक मानसिकता के अंतर्विरोध को दुष्यंत कुमार ने बखूबी उकेरा है ।

यह नाटक आधुनिक जीवन की विडंबनाओं को चित्रित करने में पूर्ण समर्थ है । इस नाटक में आधुनिक प्रजातंत्र की विसंगतियों पर करारा प्रहार किया गया है । सर्वहत जैसे काल्पनिक पात्र की उद्भावना कर दुष्यंत कुमार ने आमजन के साथ अपने आंतरिक जुड़ाव को जाहिर किया है । सर्वहत इस काव्य-नाटक का महत्त्वपूर्ण पात्र है । उसके बारे में प्रेमशंकर ने लिखा है –"एक कंठ विषपायी का राजनीतिक एहसास तीखा है और अपने सामयिक सन्दर्भो से उपज कर भी आगे बात कहता है । प्रजातंत्र से जुड़े हुए कुछ महत्त्वपूर्ण मुद्दे और कई जलते हुए सवाल यहाँ आए हैं और इसके लिए दुष्यंत ने सर्वहत जैसे सामान्य जन के पात्र को चुना है, सर्वहारा का समीपी । इसीलिए सर्वहत लगभग हर दृश्य में मौजूद है । पहले दृश्य में वह पक्षी को मुक्त करता है, दूसरे में वह छाया हुआ है, तीसरे में उसे मोहबद्ध शंकर के सामने गुंजाइश नहीं मिलती और चौथे दृश्य में वह देवलोक के नेताओं पर तीखे व्यंग्य करता है ।"[40]

यह काव्य-नाटक बहुआयामी है । राजतंत्र, लोकतंत्र, शोषण, भूख,

महत्त्वकांक्षा आदि कई सन्दर्भो में इस काव्य-नाटक को दर्शाया गया है । इस नाटक की एक अन्यतम विशेषता इसमें व्यक्त युद्ध संबंधी विचार है । रचनाकार ने युद्ध के औचित्य-अनौचित्य पर काफी गम्भीर विवेचन करते हुए यह निष्कर्ष निकाला हैं कि युद्ध के पीछे हमेशा एक ठोस और विवेकसम्मत दृष्टिकोण होना चाहिये वरना युद्ध 'आत्मरक्षा' न होकर 'सामूहिक आत्मघात' हो जाएगा । 'प्राणों की आहुति' केवल 'जीवनरक्षा' की उपलब्धि के लिए ही देना चाहिए

"युद्ध –
अधिक से अधिक विशिष्ट परिस्थितियों में
समाधान का सम्भव कारण बन सकता है,
यही नियम है
–लेकिन कोई शासक मन में
स्वयं युद्ध को ,
किसी समस्या का किंचित भी
समाधान समझे तो भ्रम है ।"[41]

इस नाटक की पृष्ठभूमि भारत-चीन युद्ध है । कवि युद्ध की भयंकर विनाशलीला के साक्ष्य रहें । इसीलिए वे मानवता का हनन करनेवाली स्थितियों के विपक्ष में हमेशा खड़े रहें । नाटककार ने इस नाटक में नस्लवादी सोच और संस्कार पर तीव्र प्रतिक्रिया व्यक्त की है । दक्ष की नस्लवादी सोच पुत्री की भलाई और

आन्नद को दरकिनार कर अपने झूठे अभिमान में विनाश की स्थिति पैदा कर देती है । प्रतिहिंसा की भावना के कारण सती और दक्ष साम्राज्य का विनाश हो जाता है । समग्रत: दुष्यंत कुमार का यह नाटक अपने साम्प्रतिक यथार्थ को उजागर करने में सफल हुआ है । अपने समय के कई ज्वलंत प्रश्नों को उठाकर दुष्यंत कुमार ने इस गीति नाट्य को सार्थक बना दिया है । यह नाटक उनके सामाजिक सम्पृक्ति का प्रामाणिक दस्तावेज है ।

दुष्यंत कुमार एक कवि के साथ–साथ एक विशिष्ट गद्य लेखक भी थे । कविताओं के अलावा उन्होंने नाटक, उपन्यास, कहानी, संस्मरण-व्यक्तिचित्र, साक्षात्कार, रूपक, निबंध, आलोचना–रिव्यू, समसामयिक विषयों पर टिप्पणियाँ और वैचारिक लेख भी लिखे हैं । छोटे सवाल' और 'आँगन में एक वृक्ष' उनके प्रसिद्ध उपन्यास हैं । दुष्यंत कुमार ने कुछ अधूरे उपन्यास भी लिखे हैं जिनमें 'अन्ना केरेनिना' और 'एक अधूरी कवि-कथा' प्रमुख है । आघात','कलियुग' ,'मिस पीटर', 'छिमिया','मड़वा उर्फ माड़े ','हाथी का प्रतिशोध' और 'वह मुसाफिर', उनकी कुल सात कहानियाँ है । उनके सभी उपन्यास और कहानियाँ दुष्यंत रचनावली के तीसरे भाग में संग्रहित है । कहानी और उपन्यास के अतिरिक्त दुष्यंत कुमार ने दुष्यंत रचनावली के चौथे भाग में इनके संस्मरण–व्यक्तिचित्र, साक्षात्कार, रूपक, निबंध, आलोचना-रिव्यू, समसामयिक विषयों पर टिप्पणियाँ और वैचारिक लेख संग्रहित किये गये हैं । उनके द्वारा लिखा गया आलोचना-रिव्यू 'हिन्दी कविता

में प्रयोग' ,'नई कविता की उपलब्धियाँ', 'नई कहानी : परम्परा और प्रगति' और 'नई कविता' नयी कविता और नयी कहानी आन्दोलन की पृष्ठभूमि को समझने में सहायक है । ये आलोचना-रिव्यू कवि के समय में अत्यंत चर्चित थे । इनमें लेखक की गंभीर वैचारिक आलोचनात्मक दृष्टि दिखाई पड़ती है । दुष्यंत कुमार की आलोचना–रिव्यू –'नई कहानी : परम्परा और प्रगति' नई कहानी पर लिखा गया पहला दस्तावेजी आलेख है, जो 'आलोचना' पत्रिका में छपा था ।

समग्र अध्ययन के उपरांत यही कहा जा सकता है कि नई कविता के दौर के रचनाकारों में दुष्यंत कुमार ने अपनी एक विशिष्ट पहचान बनायी है । उनकी रचनाएँ अपने समय को बड़ी बारीकी से पकड़ती हैं, उनपर गम्भीरता से विचार करती हैं । दुष्यंत अपने रचना-कर्म और सामान्यजन के प्रति कितने सच्चे, सजग और संवेदनशील है, इसका प्रमाण उनकी रचनाओं से मिल जाता है । कवि ने अपने आस–पास की परिस्थितियों का गहराई से अवलोकन कर, उसे शब्दाकार दिया है । उनकी कविताएँ उनके अनुभव की प्रामाणिकता को रेखांकित करती हैं । वैयक्तिक जीवन के आरोह-अवरोह के बीच रहकर भी वे सामाजिक हलचलों से अनभिज्ञ नहीं दिखते । जिस तरह से दुष्यंत कुमार ने अपनी रचनाओं के माध्यम से जनविरोधी ताकतों से दो-दो हाथ किया, वह उनके लेखकीय निष्ठा को दर्शाता है । अपने समय के ज्वलंत प्रश्नों पर विचार करती हुई उनकी कविताएँ जनता का प्रतिनिधि बन लोकतंत्र के औचित्य पर केवल सवाल ही नहीं करती अपितु उससे

समाधान की माँग भी करती है । उनके समस्त काव्य-संसार पर अगर एक विहंगम दृष्टि डाले तो वहाँ प्रेम-सौंदर्य, स्वातंत्र्योत्तर आशा-निराशा, सामान्यजन का हास-रूदन, आपातकालीन तानाशाही की क्रूरता, मीडिया का दोहरा चरित्र, पूँजीपतियों और राजनीतिज्ञों का शोषण आदि की कई तस्वीरें नजर आती है । इस तरह उनकी कविताएँ यथार्थ के प्रति उनके तीव्र आग्रह का प्रामाणिक दस्तावेज हैं ।

सन्दर्भ-सूची :

01. सं.–विजय बहादुर सिंह, दुष्यंत रचनावली भाग – 1, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण, 2007, पृष्ठ संख्या – 385

02. सं.–विजय बहादुर सिंह, यारों के यार दुष्यंत कुमार, यश पब्लिकेशन्स, दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2008, पृष्ठ संख्या – 127

03. सं.–विजय बहादुर सिंह, दुष्यंत रचनावली भाग –1, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण, 2007, पृष्ठ संख्या – 21

04. वही, पृष्ठ संख्या – 21

05. वही, पृष्ठ संख्या – 118

06. वही, पृष्ठ संख्या – 136

07. सं.– विजय बहादुर सिंह, यारों के यार दुष्यंत कुमार, यश पब्लिकेशन्स, दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2008, पृष्ठ संख्या – 93

08. सं.– विजय बहादुर सिंह, दुष्यंत रचनावली भाग – 1, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण, 2007, पृष्ठ संख्या – 120

09. वही, पृष्ठ संख्या – 166

10. वही, पृष्ठ संख्या – 32

11. सं.– विजय बहादुर सिंह, यारों के यार दुष्यंत कुमार, यश पब्लिकेशन्स, दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2008, पृष्ठ संख्या – 100

12. सं.– विजय बहादुर सिंह, दुष्यंत रचनावली भाग – 1, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण, 2007, पृष्ठ संख्या – 334

13. वर्मा धनंजय, एक आवाज : सबसे अलग दुष्यंत की रचनाशीलता, प्रस्तुति प्रकाशन, मध्यप्रदेश, प्रथम संस्करण, 2008, पृष्ठ संख्या –67

14. वही, पृष्ठ संख्या –15

16. सिंह बनय, दुष्यंत कुमार और नयी कविता : एक अनुशीलन, साहित्यागार, जयपुर, प्रथम संस्करण, 2000, पृष्ठ संख्या – 42

17. सं.- ज्ञानरंजन, पहल, अंक–86, जबलपुर, पृष्ठ संख्या – 145

18. सं.– विजय बहादुर सिंह, दुष्यंत रचनावली भाग – 1, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण 2007, पृष्ठ संख्या – 378

19. उद्धृत वही, पृष्ठ संख्या –50

20. वही, पृष्ठ संख्या – 463

21. वही, पृष्ठ संख्या – 437

22. वही, पृष्ठ संख्या – 441

23. सं.– विजय बहादुर सिंह, यारों के यार दुष्यंत कुमार, यश पब्लिकेशंस, दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2008, पृष्ठ संख्या – 100

24. सं.– विजय बहादुर सिंह, दुष्यंत रचनावली भाग-- 1 , किताबघर प्रकाशन , नई दिल्ली , द्वितीय संस्करण, 2007 , पृष्ठ संख्या – 454

25. वही, पृष्ठ संख्या – 448

26. सं.– विजय बहादुर सिंह, दुष्यंत रचनावली भाग – 2, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण, 2007, पृष्ठ संख्या – 146

27. वही, पृष्ठ संख्या – 139

28. वही, पृष्ठ संख्या – 08

29. वही, पृष्ठ संख्या –183

30. सं.– विजय बहादुर सिंह, यारों के यार दुष्यंत कुमार, यश पब्लिकेशंस, दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2008, पृष्ठ संख्या – 101

31. अष्टेकर गणेश तुलसी, दुष्यंत कुमार : रचनाएँ और रचनाकार, पंचशील प्रकाशन, जयपुर, 1989, पृष्ठ संख्या – 68

32. सं.-- विजय बहादुर सिंह, दुष्यंत रचनावली भाग – 2, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण, 2007, पृष्ठ संख्या – 237

33. सं.– विजय बहादुर सिंह, यारों के यार दुष्यंत कुमार, यश पब्लिकेशंस, दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2008, पृष्ठ संख्या – 120

34. सं.– विजय बहादुर सिंह, दुष्यंत रचनावली भाग – 2, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण, 2007, पृष्ठ संख्या – 272

35. वही, पृष्ठ संख्या – 288

36. वही, पृष्ठ संख्या – 262

37. मुजावर डा0 सरदार, दुष्यंत कुमार की गज़लों का समीक्षात्मक अध्ययन, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, 2003, पृष्ठ संख्या – 34

38. सं.– विजय बहादुर सिंह, दुष्यंत रचनावली भाग – 2, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण, 2007, पृष्ठ संख्या – 275

39. वही, पृष्ठ संख्या – 377

40. सं.– विजय बहादुर सिंह, यारों के यार दुष्यंत कुमार, यश पब्लिकेशंस, दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2008, पृष्ठ संख्या – 129

41. सं.– विजय बहादुर सिंह, दुष्यंत रचनावली भाग – 2, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण, 2007, पृष्ठ संख्या – 95